आरक्षित

उत्तराखण्ड उच्च न्यायालय, नैनीताल

आदेश संख्या 218 वर्ष 2008 से अपील

उत्तराखण्ड राज्य द्वारा जिलाधिकारी, टिहरी गढवाल

.....अपीलार्थी

बनाम

माधव नयन पुत्र श्री कमल नयान,
निवासी ग्राम जओल, पटटी बामुण्ड
जिला टिहरी गढवाल .....प्रतिवादी

उपस्थितः राज्य/अपीलार्थी की ओर से उप–महाअधिवक्ता श्री सुनील खेरा,
प्रतिवादी की ओर से श्री राकेश थपलियाल, वरिष्ठ अधिवक्ता
सहायता प्राप्त श्री मुकेश कपरूवान अधिवक्ता

निर्णय

प्रतिः माननीय रवीन्द्र मैठाणी, जे.

जिला जज न्यायालय टिहरी गढवाल द्वरा प्रकीर्ण(मध्यस्थता) वाद सं0 28 वर्ष 2005, (संक्षेप में 'वाद') श्रीमती माधव नयन बनाम आयुक्त में पारित निर्णय तथा आदेश दिनांकित 28.09.2007 के विरूद्ध वर्तमान अपील प्रस्तुत की गयी। आक्षेपित निर्णय तथा आदेश प्रत्यार्थी द्वारा धारा 34 मध्यस्थता एवं सुलह अधिनियम 1996 (संक्षेप में 'अधिनियम') के तहत एकमात्र मध्यस्थ द्वारा पारित मध्यस्थ पंचाट दिनांकित 23.04.2005 को अपास्त करने हेतु प्रस्तुत प्रार्थना पत्र पर पारित किया गया है। आक्षेपित निर्णय तथा आदेश द्वारा मध्यस्थ पंचाट को अपास्त किया गया।

2. त्वरित अपील को निस्तारित करने के लिए संक्षेप में आवश्यक तथ्य निम्नवत इस प्रकार हैः–

दिनांक 31.12.1966 को कमल नयन और परशु राम को मोटर रोड के नीचे ग्राम खुरेत में प्लॉट नं0 44 खण्ड सं0 3 कुल क्षेत्रफल 77 नाली और 14 मुठ्ठी (प्रश्नगत भूमि) में फलदार वृक्ष लगाकर एक बाग विकसित करने के उद्देश्य से पट्टा प्रदान किया गया। पट्टा डीड भी निष्पादित की गयी। दोनों पट्टाधारक मर चुके है। प्रत्यार्थी माधव नयन मूल पट्टेदार कमल नयन का पुत्र है।

दिनांक 19.09.1996 को प्रतिवादी द्वारा राहूल सोधी के पक्ष में प्रश्नगत भूमि के सम्बन्ध में एक मुख्तारनामा निष्पादित किया गया। यह प्रतीत होता है कि पटटादाता ने प्रत्यार्थी को पट्टे की शर्तो का अनुपालन न करने के सम्बन्ध में नोटिस जारी किया गया और उसके पश्चात दिनांक 28.01.2000 को एक संयुक्त निरीक्षण का आदेश दिया गया। जिसके अनुसरण में राजस्व अधिकरी एवं वन अधिकारियों ने प्रश्नगत भूमि का एक संयुक्त निरीक्षण किया। संयुक्त निरीक्षण में पाया गया कि यद्यपि प्रश्नगत भूमि में 442 फलदार वृक्ष लगाये गये परन्तु वे 1995–1996 के बाद लगाये जाने प्रतीत होते है। यह भी पाया गया कि प्रश्नगत भूमि पर राहुल सोधी द्वारा सात कमरों के दो मकान बनाये गये थे और उसके द्वारा एक चौकीदार किशन सिंह को भी वहां तैनात किया गया था जिसे वह वेतन देता था। संयुक्त निरीक्षण टीम को बताया गया कि प्रश्नगत जमीन को बेचा जा चुका हैं। संयुक्त निरीक्षण टीम द्वारा यह भी पाया गया कि प्रश्न गत भूमि को कृषि फसल व सब्जियां उगाने के लिये इस्तेमाल किया जा रहा था। इसके दृष्टिगत जिलाधिकारी टिहरी गढवाल द्वारा दिनांक 04.02.2003 को पट्टे को रद्द कर दिया गया । पट्टा डीड के रद्दीकरण के इस आदेश को रिट याचिका (एम/बी) सं0 886 वर्ष 2003, माधव नयन बनाम उत्तरांचल राज्य (संक्षेप में 'रिट याचिका') में चनौती दी गयी। यहां यह बताया जा सकता है कि पटटा पत्र दो बातो पर रद्द किया गया (i) प्रश्नगत भूमि का उस उद्देश्य के लिए प्रयोग न किया जाना जिसके लिए पट्टा प्रदत्त किया गया था। और (ii) किराया अदा न किया जाना।

दिनांक 22.09.2003 को इस न्यायालय द्वारा प्रत्यार्थी को तब से दो हफ्तों के अन्दर बकाया करों का भुगतान करने के लिए निर्देशित किया गया तथा दूसरे प्रश्न पर न्यायालय द्वारा यह अवधारित किया गया कि **''जैसा कि आवंटन की शर्तों में उल्लिखित है मामला मध्यस्थता के तहत आता है तथा मध्यस्थता आयुक्त के समक्ष निहित हैं।'' इसके अतिरिक्त न्यायालय द्वारा यह भी कहा गया कि ''उन परिस्थितियों में जैसा कि उपरोक्त निर्देशित किया गया है यदि याचिकाकर्ता बकाया करो का भुगतान कर देता है, तो वह मध्यस्थता के तहत आयुक्त के समक्ष विवाद ला सकता हैं। उस स्थिति में आयुक्त यह विनिश्चय करेगा कि क्या याचिकाकर्त्ता द्वारा भूमि का प्रयोग उन उद्देश्यों के लिए किया गया जिसके लिए वह प्रदत्त की गयी थी''** उसके बाद प्रतिवादी ने किराया चुकाया परन्तु प्रतिवादी ने मध्यस्थ के समक्ष मामला नही उठाया बल्कि जिलाधिकारी टिहरी गढवाल ने दिनांक 23.12.2003 को मामला मध्यस्थता के लिए प्रेषित किया। पत्र

दिनांकित 23.12.2003 में जिलाधिकारी, टिहरी गढवाल ने यह दर्ज किया कि बकाया किराया का भुगतान प्रतिवादी द्वारा किया जा चुका है।

मध्यस्थ द्वारा अपने पंचाट दिनांकित 23.04.2005 से यह अवलोकित किया कि जिलाधिकारी द्वारा पारित आदेश दिनांकित 04.02.2003 जिसके द्वारा पट्टे को रद्द किया गया है में हस्तक्षेप करने का कोई आधार नही है। ऐसा निंम्नलिखित आधारों पर कहा गया–

(i) वृक्ष 1995–1996 के बाद लगाये गये थे जो कि पट्टे की शर्तों का उल्लंघन है।

(ii) प्रतिवादी द्वारा प्रश्न गत भूमि में अपने समस्त अधिकारों को मुख्तारनामा के द्वारा हस्तान्तरित कर दिया गया जो एक प्रकार से उप पट्टा है और उससे चम्बा मसूरी फल बेंल्ट योजना का उददेश्य विफल हो जाता ळें

(iii) पारिवारिक बन्दोबस्त या समझौता को मान्यता नही दी गयी।

3. प्रतिवादी द्वारा पंचाट को अधिनियम की धारा 34 के तहत चनौती दी गयी और आक्षेपित आदेश द्वारा पंचाट को निरस्त किया गया। अतः अपील प्रस्तुत की गयी।

4. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता को सुना तथा अभिलेखों का अवलोकन किया।

5. राज्य की ओर से विद्वान अधिवक्ता द्वारा कहा गया कि अधिनियम की धारा 34 का दायरा बहुत अधिक प्रतिबन्धित है। यह एक अपीलीय क्षेत्राधिकार नही है : यदि अधिनियम की धारा 34 के तहत आवेदन को पंचाट के विरूद्ध अपील की तरह माना जाता है तो अधिनियम का उद्देश्य विफल हो जाएगा। राज्य की ओर से विद्वान अधिवक्ता द्वारा बहस के दौरान निम्नलिखित तथ्य उठाये गये –

(i) जैसा कि आक्षेपित आदेश में माना गया मध्यस्थ ने अपने क्षेत्राधिकार का उल्लंघन नही किया।

(ii) रिट याचिका में पारित आदेश दिनांकित 22.09.2003 के आलोक में जिलाधिकारी मध्यस्थ के समक्ष दावों को उटाने के लिए प्रतिबधित नही था। क्योकि रिट याचिका में प्रतिवादी को अपना विवाद बढाने की स्वतन्त्रता दी गयी थी जिसे उसने नही उठाया और राज्य कि ओर से जो विवाद उठाया गया यद्यपि रिट याचिका में आदेश पारित होने के बाद उठाया गया, लेकिन वह इसके प्रति स्वतन्त्र था तथा पट्टा डीड के शर्तो के अनुसार राज्य को अधिकार है कि वह मध्यस्थ के समक्ष समस्त स्वीकारीय दावों को उठाये।

(iii) पट्टा विलेख के अनसार पट्टेदार प्रश्नगत भूमि को किसी अन्य को नही दे सकता था, परन्तु मुखतारनामा निष्पादित कर प्रश्नगत भूमि को राहूल सोढी को सौप दिया गया, जिसने प्रश्नगत भूमि में एक मकान का निर्माणा किया जो पट्टा

विलेख का उल्लंघन है, तथा तथ्य का प्रश्न है, जिसे मध्यस्थ द्वारा निर्णीत किया गया, और इसे अधिनियम की धारा–34 के तहत हस्तक्षेपित नही किया जा सकता है।

(iv) जैसा कि संयुक्त निरीक्षण आख्या में उल्लिखित है कि वृक्ष वर्ष 1995–96 में लगाये गये थे, और इस तथ्य की खोज को अधिनियम की धारा–34 के तहत हस्तक्षेपित नही किया जा सकता है।

(v) जैसा कि संयुक्त निरीक्षण में पाया गया कि प्रश्नगत भूमि का प्रयोग कृषि के लिए तथा सब्जीया उगाने के लिए किया जा रहा था, इस तथ्य पर भी मध्यस्थ द्वारा अपना निष्कर्ष दिया जा चुका, जिसे अधिनियम की धारा–34 के तहत हस्तक्षेपित नही किया जाना चाहिए।

6. विद्वान अधिवक्ता द्वारा कहा गया कि वर्ष 1996 में पट्टा प्रदत्त होने के बाद लगभग–30 वर्षो तक बगीचे विकसित करने हेतु कोई वृक्षरोपण नही किया गया, बल्कि मकान का निर्माण तथा कृषि फसले एवं सब्जिया उगाई गयी, जो पट्टे विलेख का उल्लंघन है। मुख्तारनामा तो कोई नही लेकिन भूमि का कब्जा सौप दिया गया, और वह भी पट्टा विलेख से प्रतिबन्धित है। यह तर्क दिया गया कि वास्तव में मुख्य उद्देश्य यहि था कि क्षेत्र में एक फल पट्टी विकसित करे, और वह प्रतिवादी के कृत्यों से विफल कर दिया गया । पट्टा विलेख की शर्तो का उल्लंघन किया गया है, ऐसा संयुथ्त निरीक्षण रिपोर्ट में पाया गया, इसके आधार पर पट्टा रद्द किया गया तथा मध्यस्थ द्वारा संदर्भ को सही रूप से निर्णीत किया गया है। लेकिन यह तर्क दिया गया है कि विद्वान अवर न्यायालय द्वारा तथ्यों पहलुओं का पुर्नमुल्यांकन करने में अधिनियम की धारा–34 के अन्तर्गत अपने क्षेत्राधिकार की सीमा को पार किया गया इसीलिए यह तर्क दिया गया कि आक्षेपित निर्णय अपास्त किये जाने तथा अपील स्वीकृत किये जाने योग्य है।

7. अपने तर्को के समर्थन में, विद्वान अधिवक्ता द्वारा एम एम टी सी लीमिटिड बनाम वेदन्ता लिमिटिड (2019) 4 एस सी सी 163 और परसा केन्टे कॉलिरेरीज लि0 बनाम राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटिड, 2019 एस सी सी 236 मे प्रतिपादित कानून के सिद्धान्तों पर निर्भरता स्थापित की गयी ।

8. एम एम टी सी लीमिटिड बनाम वेदन्ता लिमिटिड (उपरोक्त) के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिनियम की धारा 34 के दायरे पर चर्चा की तथा यह निर्धारित किया –

''11. जहां तक धारा 34 का सवाल है, स्थिति अब तक अच्छी तरह से तय हो चुकी है कि न्यायालय मध्यस्थ पुरस्कार पर अपील में नहीं बैठता है और धारा 34(2)(बी)(ii) के तहत प्रदान किए गए सीमित आधार पर गुण–दोष के आधार पर हस्तक्षेप कर सकता है।,

अर्थात यदि पुरस्कार भारत की सार्वजनिक नीति के विरुद्ध है। 2015 में 1996 के अधिनियम में संशोधन से पहले इस न्यायालय के निर्णयों के माध्यम से स्पष्ट की गई कानूनी स्थिति के अनुसार, भारतीय सार्वजनिक नीति का उल्लंघन, बदले में, भारतीय कानून की मौलिक नीति का उल्लंघन, भारत के हित का उल्लंघन, न्याय या नैतिकता के साथ संघर्ष, और मध्यस्थ पुरस्कार में पेटेंट अवैधता का अस्तित्व शामिल है। इसके अतिरिक्त, ''भारतीय कानून की मौलिक नीति'' की अवधारणा में कानून और न्यायिक मिसालों का अनुपालन, न्यायिक दृष्टिकोण अपनाना, प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का अनुपालन और वेडनसबरी[1] तर्कसंगतता शामिल होगी। इसके अलावा, ''पेटेंट अवैधता'' का अर्थ स्वयं भारत के मूल कानून का उल्लंघन, 1996 अधिनियम का उल्लंघन तथा संविदा की शर्तो का उल्लंघन माना गया है।

12. इन शर्तों में से एक पूरी होने पर ही न्यायालय धारा 34(2)(बी)(ii) के संदर्भ में मध्यस्थ पुरस्कार में हस्तक्षेप कर सकता है। लेकिन इस तरह के हस्तक्षेप से विवाद के गुणों की समीक्षा नहीं होती है, और यह उन स्थितियों तक सीमित है जहां मध्यस्थ के निष्कर्ष मनमाने, मनमौजी या विकृत हैं, या जब न्यायालय की अंतरात्मा को झटका लगता है, या जब अवैधता मामूली बात नहीं है बल्कि मामले की जड़ तक जाती है। यदि मध्यस्थ द्वारा लिया गया दृष्टिकोण तथ्यों पर आधारित संभावित दृष्टिकोण है तो किसी मध्यस्थ पुरस्कार में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है। (एसोसिएट बिल्डर्स बनाम डीडीए[2],ओएनजीसी लिमिटेड बनाम सॉ पाइप्स लिमिटेड[3] भी देखेंये, हिंदुस्तान जिंक लिमिटेड बनाम फ्रेंड्स कोल कार्बोनाइजेशन[4] और मैकडरमॉट इंटरनेशनल बनाम बर्न स्टैंडर्ड कंपनी लिमिटेड,[5])

9. परसा केन्टे कॉलिरेरीज लि0 (उपरोक्त) के मामले में भी माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिनियम की धारा 34 के दायरे की व्याख्या की और इस बिन्दू पर निर्णीत मामलों को सन्दर्भित किया तथा निम्नवत निर्धारित किया–

''9.1 एसोसिएट बिल्डर्स[6] के मामले में, इस न्यायालय के पास ध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए मध्यस्थ द्वारा पारित पुरस्कार में हस्तक्षेप करने के न्यायालय के अधिकार क्षेत्र पर विस्तार से विचार करने का अवसर था। उपरोक्त निर्णय में, इस न्यायालय ने मध्यस्थ पुरस्कार में हस्तक्षेप करने की न्यायालय की शक्ति की सीमा पर विचार किया है। यह देखा और माना जाता है कि केवल तभी जब निर्णय भारत में सार्वजनिक नीति के साथ टकराव में हो, तो न्यायालय को मध्यस्थ पुरस्कार में हस्तक्षेप करना उचित होगा। उपरोक्त निर्णय में, इस न्यायालय ने ''भारत में सार्वजनिक नीति'' के विभिन्न प्रमुखों पर विचार किया, जिसमें अन्य बातों के साथ–साथ पेटेंट अवैधता भी शामिल है।

1. एसोसिएटेड प्रांतीय पिक्चर हाउस बनाम् वेंजबरी कॉपरेशन (1948) 1के0बी0 223 (सी0ए0)
2. (2015) 3 एस0सी0सी 49 : (2015) 2एस0सी0सी0 (सिविल) 204।
3. (2003) 5 एस0सी0सी 705
4. (2006) 4 एस0सी0सी 445
5. (2006) 11एस0सी0सी 181
6. एसोसिएट बिल्डर्स बनाम् डी0डी0ए0, (2015) 3 एस0सी0सी0 49 : (2015) 2 एस0सी0सी0 (सिविल) 204।

मध्यस्थता अधिनियम की धारा 28(3) का उल्लेख करने के बाद और मैकडरमॉट इंटरनेशनल इंक. बनाम बर्न स्टैंडर्ड कंपनी लिमिटेड[7] एससीसी पैरा 112–113 और राष्ट्रीय इस्पात निगम

लिमिटेड बनाम दीवान चंद राम सरन[8] एससीसी पैरा 43–45 के मामलों में इस न्यायालय के निर्णयों पर विचार करने के बाद यह देखा और माना जाता है कि एक मध्यस्थ न्यायाधिकरण को अनुबंध की शर्तों के अनुसार निर्णय लेना चाहिए, लेकिन यदि कोई मध्यस्थ अनुबंध की शर्तों का अर्थ उचित तरीके से लगाता है, इसका मतलब यह नहीं होगा कि इस आधार पर पुरस्कार को रद्द किया जा सकता है। यह आगे देखा और माना जाता है कि अनुबंध की शर्तों का निर्माण मुख्य रूप से एक मध्यस्थ के लिए निर्णय लेना है जब तक कि मध्यस्थ अनुबंध को इस तरह से नहीं समझता है कि यह कुछ ऐसा कहा जा सकता है जो कोई भी निष्पक्ष दिमाग वाला या उचित व्यक्ति नहीं कर सकता है। इस न्यायालय द्वारा पूर्वोक्त निर्णय के पैराग्राफ 33 में आगे यह देखा गया है कि जब कोई अदालत मध्यस्थता पुरस्कार के लिए ''सार्वजनिक नीति'' परीक्षण लागू कर रही है, तो यह अपील की अदालत के रूप में कार्य नहीं करती है और परिणामस्वरूप तथ्य की त्रुटियों को ठीक नहीं किया जा सकता है।तथ्यों पर मध्यस्थ के संभावित दृष्टिकोण को अनिवार्य रूप से पारित किया जाना चाहिए क्योंकि मध्यस्थ अपना मध्यस्थ निर्णय देते समय भरोसा करने के लिए सबूत की मात्रा और गुणवत्ता का अंतिम स्वामी होता है। आगे यह देखा गया है कि इस प्रकार कम सबूतों या सबूतों पर आधारित एक पुरस्कार जो प्रशिक्षित कानूनी दिमाग के लिए गुणवत्ता में नहीं मापता है उसे इस स्कोर पर अमान्य नहीं माना जाएगा।''

10. दूसरी ओर प्रतिवादी की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा तर्क दिया गया कि आक्षेपित निर्णय एवं आदेश कानून के अनुसार पारित किया गया है, और इसमें किसी हस्तक्षेप किये जाने की आवश्यकता नही है। यह भी तर्क दिया गया कि मुख्तारनामा के निष्पादन कों एक स्थानान्तरण नही माना जा सकता। इसे कानून द्वारा मान्यता प्राप्त है तथा यह पट्टा अभिलेख की शर्तो का उल्लंघन नही करता है। यह भी तर्क दिया गया है कि वास्तव में मध्यस्थ द्वारा मुख्तारनामा से सम्बन्धित प्रश्न को निर्णीत करने में अपने क्षेत्राधिकार से बाहर कार्य किया गया है क्योंकि एक मात्र निर्णय जिसे मध्यस्थ निर्णीत कर सकता था, वह भूमि के प्रयोग से सम्बधित था जैसा कि न्यायालय द्वारा रिट याचिका में दिनांक 22–09–2003 को निर्देशित किया गया था। यह तर्क दिया गया कि चूँकि पंचाटका कानून के अनुसार नही तथा भारत की सार्वजनिक नीति के विरूद्ध था अतः इसे उचित रूप से अपास्त किया गया। अपने तर्को के समर्थन में विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने उडीसा माईनिंग कार्पोरेशन लिमिटिड बनाम प्राणनाथ विश्वनाथ रावली (1977) 3 एस.सी,सी, 535 तथा भारत संघ बनाम जी.एस. अटवाल एण्ड कम्पनी (आसन

7. (2006) 11 एस0सी0सी 181
8. (20012) 5 एस0सी0सी0 306

सोल), (1996) 3 एस,सी,सी, 568,, सैयद अब्दुल खदेर बनाम रामी रेड्डी और अन्य (1979) 2 एस,सी,सी, 601 में प्रतिपादित कानून के सिद्धान्तों पर निर्भरता स्थापित की।

11. उडीसा माईनिंग कार्पोरेशन लिमिटिड (सुपरा) में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा मध्यस्थ के क्षेत्राधिकार के दायरे पर चर्चा की गयी, और अवलोकित किया कि ''**जब राशि वाद पत्र में निर्दिष्ट की गई हो तथा सन्दर्भ वाद पत्र में किये गये दावे तक ही सिमित हो तो मध्यस्थ को अपना पंचाट केवल दावे तक ही सिमित रखना होगा। हम सन्तुष्ट है कि इस मामले में मध्यस्थ ने उस दावे पर, जो प्रतिवादी द्वारा उसके समक्ष पहली बार रखा गया हो, पर निर्णय करने में अपने क्षेत्राधिकार के बाहर कार्य किया है। इसलिए पंचाट में यह एक स्पष्ट त्रुटि है।**''

12. जी.एस. अटवाल (सूप्रा) में माननीय उच्चतम न्यायाल द्वारा यह अवर्धारित किया गया कि ''**लेकिन मध्यस्थ अपनी मध्यस्थता के दायरे को विस्तृत नही कर सकता और अपने क्षेत्राधिकार को विस्तृत कर अस्वीकृत या आपत्ति वाले दावों पर सभी दावों की एकमुस्त धनराशि का एक अतार्किक पंचाट नही बना सकता है।**''

13. सैयद अब्दुल खदेर (सूप्रा) में माननीय उच्चतम न्यायाल द्वारा संविदा अधिनियम 1872 की धारा 182 के एंजेंसी से सम्बन्धित प्रावधानों पर चर्चा की तथा इस प्रस्ताव से सहमत हुए कि **''सह प्रिंसिपल संयुक्त रूप से अपने लिए कार्य करने के लिए एक एंजेंट को नियुक्त कर सकते है और ऐसे में संयुक्त रूप से उसके प्रति उत्तरदायी हो जाते है और संयुक्त रूप से उस पर मुकदमा कर सकते है।**'' तथा आगे यह कहा गया कि **''निस्संदेह, जहां किसी व्यक्ति को, उस व्यक्ति जिसे कुछ चीजों के सम्बन्ध में कार्य करने का अधिकार है, एंजेसी संविदा के तहत प्रिंसिपल की ओर से कार्य करने का अधिकार है वहां लिखित उपकरण द्वारा प्रदत्त प्राधिकार का सख्ती से अर्थ लगाया जाना चाहिए। सामान्यतः न्यायालयों द्वारा मुख्तारनामा का सख्ती से अर्थ लगाया जाता है''**

14. अधिनियम की धारा 34 के तहत पंचाट को चनौती दी गयी जो कि निम्नवत है :–

> **''34. माध्यस्थम् पंचाट अपास्त करने के लिए आवेदन–** (1) माध्यस्थम् पंचाट के विरूद्ध, न्यायालय का आश्रय केवल उपधारा (2) या उपधारा (3) के अनुसार, ऐस पंचाट को अपास्त करने के लिए आवेदन करके ही लिया जा सकेगा।
>
> (2) कोई मध्यस्थम् पंचाट न्यायालय द्वारा तभी अपास्त किया जा सकेगा, यदि–
>
> (क) आवेदन करने वाला पक्षकार यह सबूत देता है कि–
>
> (i) कोई पक्षकार किसी असमर्थता से ग्रस्त था, या
>
> (ii) मध्यस्थम् करार उस विधि के,जिसके अधीन पक्षकारों ने उसे किया है या इस बारे में कोई संकेत न होने पर, तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन विधिमान्य नहीं है; या
>
> (iii) आवेदन करने वाले पक्षकार को, मध्यस्थ की नियुक्ति की या माध्यस्थम् कार्यवाहियों की उचित सूचना नहीं दी गई थी, या वह अपना मामला प्रस्तुत करने में अन्यथा असमर्थ था; या
>
> (iv) माध्यस्थम् पंचाट ऐसे विवाद से संबंधित है जो अनुध्यात नहीं किया गया है या माध्यस्थम् के लिए निवेदन करने के लिए रख गए निबंधनों के भीतर नहीं आता है या

उसमें ऐसी बातों के बारे में विनिश्चय है जो माध्यस्थम् के लिए निवेदित विषयक्षेत्र से बाहर हैः परन्तु यदि, माध्यस्थम् के लिए निवेदित किए गए विषयों पर विनिश्चियों को उन विषयों के बारे में किए गए विनिश्चयों से पृथक् किया जा सकता है, जिन्हें निवेदित नहीं किया गया है, तो माध्यस्थम् पंचाट के केवल उस भाग को, जिसमें मध्यस्थम् के लिए निवेदित न किए गए विषयों पर विनिश्चय है, अपास्त किया जा सकेगा; या

(v) माध्यस्थम् अधिकरण की संरचना या माध्यस्थम् प्रक्रिया, पक्षकारों के करार के अनुसार नहीं थी, जब तक कि ऐसा करार इस भाग के उपबंधों के विरोध में न हो ओर जिसमें पक्षकार नहीं हट सकते थे, या ऐसे करार के अभाव में, इस भाग के अनुसार नहीं थी; या

(ख) न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि–

(i) विवाद की विषय– वस्तु, तत्समय प्रवृत्त विधि के अधीन माध्यस्थम् द्वारा निपटाए जाने योग्य नही है; या

(ii) माध्यस्थम् पंचाट भारत की लोक नीति के विरूद्ध है।

स्पष्टीकरण– उपखंड (ii) की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, किसी शंका को दूर करने के लिए यह घोषित किया जाता है कि कोई पंचाट भारत की लोक नीति के विरूद्ध है यदि –

(i) पंचाट का दिया जाना कपट या भ्रष्ट आचरण द्वारा उत्प्रेरित या प्रभावित किया गया था या धारा 75 अथवा धारा 81 के अतिक्रमण में था।

(ii) वह भारतीय कानून की मौलिक नीति का उल्लंघन है या

(iii) वह नैतिकता या न्याय की अत्यंत आधार भूत धारणाओं के विरोध में है।

स्पष्टीकरण 2. किसी शंका को दूर करने के लिए, इस बात की जांच कि भारतीय विधि का मूलभूत नीति का उल्लंघन हुआ है अथवा नही, विवाद के गुणावगुण के पुर्नविलोकन के अवाश्यक नहीं बनाएगी।

(2क) अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक माध्यसीमों से भिन्न माध्यसीमों से उद्भूत किसी माध्यसिम् पंचाट को भी न्यायालय द्वारा अपास्त किया जा सकेगा यदि न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि पंचाट को देखने से ही यह प्रतीत होता है कि वह प्रकट अवैधता से दूषित हैः

परन्तु किसी पंचाट को केवल विधि के गलत उपयोग के आधार पर साक्ष्य का पूनर्मूल्यांकन करके अपास्त नहीं किया जाएगा।

(3) अपास्त करने के लिए कोई आवेदन, उस तारीख से, जिसको आवेदन करने वाले पक्षकार ने माध्यस्थम् पंचाट प्राप्त किया था, या यदि अनुरोध धारा 33 के अधीन किया गया है जो उस तारीख से, जिसको माध्यथम् अधिकरण द्वारा अनुरोध का निपटारा किया गया था, तीन मास के अवसान के पश्चात् नहीं किया जाएगाः परन्तु यह कि जहां न्यायालय का यह समाधन हो जाता है कि आवेदक उक्त तीन मास की

अवधि के भीतर आवेदन करने से पर्याप्त कारणों से निवारित किया गया था तो वह तीस दिन की अतिरिक्त अवधि में आवेदन ग्रहण कर सकेगा किन्तु इसके नश्चात् नहीं।

(4) उपधारा (1) के अधीन आवेदन प्राप्त होन पर, जहां यह समुचित हो और इसके लिए किसी पक्षकार द्वारा अनुरोध किया जाए, वहां न्यायालय, माध्यस्थम् अधिकरण को इस बात का अवसर दने के लिए कि वह माध्यस्थम् कार्यवाहियों को चालू रख सके या ऐसी कोई अन्य कार्रवाई कर सके जिसमें माध्यस्थम् अधिकरण की राय में माध्यस्थम् पंचाट के अपास्त करने के लिए आधार समाप्त हो जाएं, कार्यवाहियों को उतनी अवधि के लिए स्थगित कर सकेगा जो उसके द्वारा अवधारित की जाएं।

(5) इस धारा के अधीन कोई आवेदन किसी पक्षकार द्वारा दूसरे पक्षकार को पूर्व सूचना जारी करने के पश्चात ही फाइल किया जाएगा और ऐसे आवेदन के साथ आवेदक द्वारा उक्त अपेक्षा के अनुपालन का पृष्ठांकन करते हुए एक शपथपत्र संलग्न किया जाएगा।

(6) इस धारा के अधीन आवेदन का निपटारा यथाशीघ्र और किसी भी दशा में उस तारीख से, जिसकी उपधारा (5) में निर्दिष्ट सूचना दूसरे पक्षकार पर तामील की जाती है, एक वर्ष की अवधि के भीतर किया जाएगा।''

15. धारा 34 (2)(बी) के स्पष्टीकरण 1 को वर्ष 2015 में संशोधित किया गया है। इससे पूर्व यह निम्नवत थाः–

''स्प्ष्टीकरण– उपखंड (ii) की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, किसी शंका को दूर करने के लिए यह घोषित किया जाता है कि कोई पंचाट भारत की लोक नीति के विरुद्ध है यदि पंचाट का दिया जाना कपट या भ्रष्ट आचरण द्वारा उत्प्रेरित या प्रभावित किया गया था या धारा 75 अथवा धारा 81 के अतिक्रमण में था।''

16. आक्षेपित निर्णय तथा आदेश से पंचाट को अपास्त करते हुए यह अवधारित किया गया जो निम्नवत हैः–

i. संयुक्त निरीक्षण आख्या में लगाये गये वृक्षों के अनुमानित जीवन के सम्बन्ध में न तो कोई कारण दिया गया और न ही मध्यस्थ द्वारा इस पहलू पर कोई साक्ष्य लिया गया, इसलिए पंचाट एक स्वतन्त्र अर्ध्द न्यायिक रूप में नही बनाया गया।

ii. मुख्तारनामा या पारिवारिक बन्दोबस्त के द्वारा हस्तान्तरण सन्दर्भ का भाग नही था और मध्यस्थ ने इन विवादों को निर्णीत करने में अपने क्षेत्राधिकार से बाहर कार्य किया हैं।

iii. मुख्तारनामा का निष्पादन पॉवर ऑफ एटॉर्नी एक्ट, 1882 से नियंत्रित है। एटोर्नी मालिक नही बनात, मध्यस्थ द्वारा यह माना गया कि मुख्तारनामा के निष्पादन से भूमि हस्तानान्तरित या सबलेट हो गयी यह पंचाट या निष्कर्ष स्पस्ट रूप से भारत की सार्वजनिक नीति के विरूद्ध है।

17. यह भी ध्यान देने योग्य है कि आक्षेपित निर्णय के पृष्ट–14 पैरा–2 में यह भी देखा गया है कि अधिनियम की धारा–34 के तहत आवेदन में न्यायालय अपीलिय न्यायालय के रूप में नही बैठता है।

18. शब्द ''भारत की सार्वजनिक नीति'' विभिन्न मामलों में चर्चा का विषय रहा है। आयॅल एण्ड नेचुरल गैस कार्पोरेशन लिमिटिड बनाम सॉ पाईप्स लिमिटिड,(2003) 5 एस.सी.सी. 705 में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा कहा गया कि **'' इसिलिए ऐसे मामले में जहां पंचाट की वैद्यता को चुनौती दी गई है,शब्द ''भारत की सार्वजनिक नीति'' को संकीर्ण अर्थ दिये जाने की आवश्यक्ता नही है। इसके विपरीत व्यापक अर्थ दिये जाने की आवश्यक्ता है ताकि मध्यस्थ न्यायाधिकरण द्वारा पारित ''स्पष्ट रूप से अवैध पंचाट'' को अपास्त किया जा सके ।**

19. जैसा कि उपरोक्त कहा गया है, एम,एम,टी,सी, (सुपरा) के मामले में भारतीय सार्वजनिक नीति के उल्लंघन के दायरे को आगे व्याख्यानित किया गया हैं।

20. यह भी स्थापित कानून है कि अधिनियम की धारा–34 के अन्तर्गत हस्तक्षेप का मतलब विवाद के गुण–दोष पर समीक्षा करना नही होता है। हस्तक्षेप केवल तभी स्वीकृत है जब निष्कर्ष मनमाना या विकृत हो या जब न्यायालय के अर्न्तात्मा को आघात पहुॅचता हो या जब अवैधता मामले की जड तक पहुॅच जाये। अधिनियम की धारा–34 के तहत न्यायालय अपीलिय न्यायालय की तरह कार्य नही करता है। तथ्यों कि त्रुटियों को हलक में नही सुधारा जा सकता है। यदि मध्यस्थ द्वारा लिया गया दृष्टिकोण तथ्यों पर आधारित संभव दृष्टिकोण है तों इसमें हस्तक्षेप नही करना चाहिए।

21. क्या मध्यस्थ ने अपने अधिकार क्षेत्र का उल्लंघन किया है ? पट्टा जिलामजिस्ट्रेट टिहरी गढवाल द्वारा दिनांक 04–02–2003 को रद्द कर दिया गया जिसे रिट याचिका में चुनौती दी गई। दिनांक 22.09.2003 को मध्यस्थता के तहत प्रतिवादी को आयुक्त के समक्ष विवाद उठाने के लिए अनुमति दी गयी थी। पट्टा विलेख में स्वंय निहित मध्यस्थता खण्ड के आलोक में यह न्यायालय द्वारा किया गया।न्यायालय द्वारा अपने आदेश दिनांकित 22.09.2003 में यह अवलोकित या निर्धारित किया गया कि **''ऐसे में, आयुक्त इस प्रश्न को निर्णीत करेगा कि क्या याचिकाकर्त्ता द्वारा भूमि को उस उद्देश्य के लिए प्रयोग किया गया जिसके लिए वह प्रदत्त किया गया।''** शब्द 'ऐसे में' महत्वपूर्ण है। यह वाक्य से संबंधित है जो कहता है कि **''जैसा कि उपरोक्त निर्देशित किया गया है यदि याचिकाकर्ता बकाया करो का भुगतान कर देता है, तो वह मध्यस्थता के तहत आयुक्त के समक्ष**

विवाद ला सकता हैं।" लेकिन प्रस्तुत मामले में प्रतिवादी द्वारा मध्यस्थ के समक्ष कोई विवाद नही उठाया गया। इस सम्बन्ध में कोई विवाद नही है कि पट्टा विलेख में मध्यस्थता का प्रावधान है। राज्य द्वारा मामले को मध्यस्थता के लिए संदर्भित किया गया और संदर्भ में यह कहा गया कि सम्बन्धित मन्त्री की अध्यक्षता वाली एक बैठक में यह निर्णय लिया गया कि पॉवर ऑफ एटॉर्नी का निष्पादन पट्टा विलेख की शर्तों का उल्लंघन भी माना जाएगा।

22. यदि प्रतिवादी ने मध्यक्ष के समक्ष अपने दावे को उठाया होता तो यह प्रश्नगत भूमि का रिट याचिका में इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनांकित 22.09.2003 के अनुपालन में प्रयोग किये जाने तक ही प्रतिबन्धित होता। लेकिन जैसा की कहा गया है प्रतिवादी ने विवाद नही उठाया।

23. राज्य ने पहले ही पट्टा विलेख को रद्द कर दिया, लेकिन चूकि रिट याचिका में इस न्यायालय द्वारा एक आदेश पारित किया गया, राज्य ने मामले को मध्यस्थ को संदर्भित किया। यदि इस न्यायालय द्वारा रिट याचिका मे पारित आदेश दिनांकित 22.09.2003 के बाद, पट्टा विलेख के उल्लंघन को दर्शित करने वाले कुछ ओर आधार मौजूद हो तो पट्टा विलेख की शर्तो के अनुसार राज्य निश्चित रूप से मध्यस्थ के समक्ष दावा उठाने के लिए स्वतंत्र था। राज्य इस न्यायालय के आदेश दिनांकित 22.09.2003 से प्रतिबन्धित नही था।

24. यदि यह मामला अन्य पहलू से देखा जाए तो विदित होता है कि जिलामजिस्ट्रेट, टिहरी गढवाल द्वारा मध्यस्थ को किया गया संदर्भ अनिवार्य रूप से पट्टा विलेख की शर्तों के उल्लंघन तक प्रतिबन्धित था। ऐसा दावा पट्टा विलेख की शर्तों के अनुसार उठाया जा सकता था। मूल रूप से, संन्दर्भ पट्टा विलेख की शर्तों के उल्लंघन के सम्बन्ध में था। मध्यस्थ को किये गये सन्दर्भ में, राज्य द्वारा कहा गया कि पॉवर ऑफ एटॉर्नी के निष्पादन को पटटा विलेख का उल्लंधन माना गया है।

25. विवादित भूमि के प्रयोग का प्रश्न भी पटटा विलेख के उल्लंघन से सम्बन्धित था। तो यदि , राज्य ने पॉवर ऑफ एटॉर्नी के निष्पादन का मुददा भी उठाया है तो इसका मतलब यह नही है कि रिट याचिका में पारित न्यायालय के आदेश दिनांकित 22.09.2003 के उल्लंघन में संदर्भ किया गया हो। संक्षेप में, प्रश्न यह है कि क्या प्रश्न गत भूमि का प्रयोग पटटा विलेख की शर्तो के अनुसार किया गया तथा उस सीमा तक सन्दर्भ किया गया और मध्यस्थ द्वारा विचार किया गया। मध्यस्थ अपने क्षेत्राधिकार का विस्तार नही करता, जब वह पॉवर ऑफ एटॉर्नी/ मुख्तारनामा के प्रश्न पर विचार करता है। इसलिए ऐसा कहना सही नही होगा कि मध्यस्थ किसी भी तरह से अपने क्षेत्राधिकार से बाहर निकल गया।

26. पट्टा विलेख प्रारम्भिक पट्टेदार को वर्ष 1966 में दी गयी थी। वर्ष 1996 में उन्होने पॉवर ऑफ एटॉर्नी निष्पादित की। यह पॉवर ऑफ एटॉर्नी क्या है? निस्सन्देह यह कानून द्वारा मान्यता प्राप्त है। एक अधिनियम है जो इसे नियंत्रित करता है यानि पॉवर ऑफ एटॉर्नी एक्ट, 1882 लेकिन विभिन्न कारणों के लिए पॉवर ऑफ एटॉर्नी के प्रयोग को नजरन्दाज नही किया जा सकता।

27. सूरज लैंप एण्ड इडस्ट्रीज प्राइवेट लिमिटिड (2) निदेशक के माध्यम से बनाम हरियाणा राज्य एवं अन्य (2012) 1 एस. सी. सी 656 के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा यह निर्धारित किया गया कि–

> ''4. पूर्व आदेश दिनांकित 15.5.2009[9] में इस तरह के एसए/जीपीए/विल टरांजेक्सन (अर्थात काले धन का अपराध, भू–माफिया की वृद्धि और नागरिक आबादी का अपराधीकरण) के दुष्परिणामों को नोट किया गया थाः
>
> ''19. एसए/जीपीए/विल' सचिवालय का सहारा मुक्त स्वामित्व के संबंध में लिया गया है, भले ही निम्न श्रेणी के लोगों द्वारा ऐसी संपत्ति के स्थानांतरण या स्थानांतरण के संबंध में रोक या निषेध न होः
>
> (ए) अपूर्ण शीर्षक वाले विक्रेता जो स्थानांतरण के लिए पंजीकृत विलेखों को निष्पादित नहीं कर सकते हैं या नहीं करना चाहते हैं।
>
> (बी) क्रेता जो किसी भी सार्वजनिक रिकॉर्ड के बिना अचल संपत्ति में अघोषित धन/आय का निवेश करना चाहते हैं। यह प्रक्रिया उन्हें भी संपत्ति को धारित संपत्ति के रूप में दिखाये बिना कितनी भी सम्पत्ति रखने में सक्षम बनाती है।
>
> (सी) क्रेता, जो अनावृत्त या गलत सलाह पर स्टाम्प शुल्क और पंजीकरण शुल्क के भुगतान से बचना चाहते हैं। व्यक्ति जो रियल एस्टेट का बिजनेस करते है वे अपने लाभ को बढ़ाने के लिए कई स्टाम्प शुल्क/पंजीकरण शुल्क से बचने के लिए इन निवेशकों का सहारा लेते हैं।
>
> 20. आशय जो भी हो, एसए/जीपीए/विल ट्रान्जेक्सन के परिणाम परेशान करने वालेऔर दूरगामी होंगे, जो उद्योग, नागरिक समाज और कानून–व्यवस्था पर विपरीत प्रभाव डालेंगे। सबसे पहले, यह बड़े पैमाने पर ऋण, संपत्ति कर, स्टांप शुल्क और पंजीकरण शुल्क की चोरी को सक्षम बनाता है जिससे सरकार और जनता को इस तरह के राजस्व का लाभ नहीं मिलता है। दूसरा, ऐसे लेन–देन अघोषित धन/आय वाले लोगों को अपना काला धन निवेश करने औरलाभ/आय अर्जित करने में भी सक्षम बनाते है, जिससे काले धन और भ्रष्टाचार के प्रसार को बढ़ावा मिलता है।
>
> 21. इस प्रकार के लेन–देन के विनाशकारी संपार्श्विक प्रभाव भी होते हैं। उदाहरण

9. (2009) 07 एस0सी0सी 363 : (2009) 03 एस0सी0सी 126

> के लिए, जब बाजार की कीमत बढ़ जाती है, तो कई विक्रेता (जिन्होंने पंजीकरण के बिना पावर ऑफ अटॉर्नी की बिक्री प्रभावित होती है) इस तथ्य का लाभ उठाते हुए कि किसी भी सार्वजनिक कार्यालय में कोई भी पंजीकृत उपकरण या रिकॉर्ड नहीं है, संपत्ति

को फिर से बेचने का प्रयास करते है जिससे क्रेता को धोखा दिया जाता है। जब इस तरह के 'पावर ऑफ अटॉर्नी सेल' के तहत क्रेता को विक्रेता के कार्यों के बारे में पता चलता है, तो वह विवाद को सुलझाने और अपने अधिकार की रक्षा के लिए बाहुबलियों की मदद लेने की कोशिश करता है। दूसरी ओर, रियल एस्टेट माफिया कई बार ऐसी संपत्तियां खरीदते है जो पहले से ही पावर ऑफ अटॉर्नी सेल के अधीन हैं और फिर पिछले 'पावर ऑफ अटॉर्नी सेल' क्रेता को उनके अधिकार का दावा करने से धमाकाते है। किसी भी तरह से, ऐसी 'पावर ऑफ अटॉर्नी सेल' अप्रत्यक्ष रूप से रियल एस्टेट माफिया और रियल एस्टेट लेन देन के अपराधिकरण को बढावा देती है।''

यह शीर्षक के सत्यापन और प्रमाण पत्र को भी कठिन बनाता है, जो अचल संपत्ति से संबंधित बिक्री के व्यवसाय संचालन का एक सिद्धांत है, यदि असंभव नहीं है, तो कठिन है, अच्छे और विपणन योग्य शीर्षक के साथ संपत्ति का मालिक बनने की चाहत सदाचार क्रेता को बुरे सपने दे रही है।''

28. कानून के तहत पावर ऑफ अटॉर्नी भूमि का हस्तान्तरण नही है यह सच है कि यह बिक्री के बराबर नही होना चाहिए लेकिन जैसा कि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सूरज लैंप(सुप्रा) मे देखा गया है कि पावर ऑफ अटॉर्नी तब निष्पादित की जाती है जब अपूर्ण शीर्षक वाले विक्रेता, जो न तो हस्तान्तरण की पंजीकृत विलेख को निष्पादित करना चाहते है और न कर सकतें है, पावर ऑफ अटॉर्नी का सहारा लेते ळें

29. पट्टा विलेख दिनांकित 31.12.1966 की शर्त 2(बी) स्पष्ट रूप से निर्धारित करती है कि पटटेदार विवादित भूमि को न तो किराये पर देगा और न ही किसी ओर को सौंप देगा। पावर ऑफ अटॉर्नी अभिलेख में है प्रथम पृष्ठ, अन्तिम पैरा स्पष्ट रूप से दर्ज करता है कि प्रतिवादी अपने रोजगार के कारण विवादित भूमि की देखभाल करने में असमर्थ है और पैरा नं0 13 में वह विवादित भूमि से सम्बन्धित समस्त व्यापक अधिकार राहुल सोधी को दे देता है। मध्यस्थ न्यायाधिकरण द्वारा यह सही निष्कर्ष दिया गया है कि यह भूमि को सौंप देना है जो कि पटटा विलेख के तहत स्वीकार्य नही है। मध्यस्थ न्यायाधिकरण द्वारा यह सही निष्कर्ष दिया गया है कि पावर ऑफ अटॉनी का निष्पादन चम्बा, मसूरी फल बेल्ट योजना के उददेश्य को विफल करता है। ऐसा करने में मध्यस्थ न्यायाधिकरण द्वारा अपने क्षेत्राधिकार का उल्लंघन नही किया गया है।

30. मुख्य प्रश्न भूमि का प्रयोग है। संयुक्त निरीक्षण आख्या अभिलेख पर है जो स्पष्ट रूप से यह दर्ज करती है कि विवादित भूमि पर कृषि फसलें और साथ ही साथ सब्जियां उगायी जा रही थी तथा वृक्ष वर्ष 1996 में लगाये गये थे।यह संयुक्त निरीक्षण रेंज अधिकारी, राजस्व अधिकारियों, तहसीलदार, प्रभागीय वन अधिकारियों , जिला बागवानी अधिकारी तथा कई अन्य वन और राजस्व विभाग के

अधिकारियों द्वारा किया गया था। आक्षेपित आदेश में यह कहा गया कि संयुक्त निरीक्षण रिपोर्ट वृक्षों की अनुमानित आयु के बारे में कोई कारण नही देती। यह अधिनियम की धारा 34 के क्षेत्राधिकार के दायरे से परे है। यह तथ्यात्मक पहलू है कि वह व्यक्ति जिन्होने पेडों की उम्र को अनुमानित किया वे पेडों की उम्र से अनभिज्ञ नही थे। वे राजस्व अधिकारी तथा वन अधिकारी थे और जैसा कि कहा गया है कि तथ्यों की खोज को तब तक हस्तक्षेपित नही किया जा सकता जब तक कि वह मनमानी, मन मौजी व विकृत न हो या जब तक कि न्यायालय की अन्तरात्मा को आघात न पहूचें। वर्तमान मामला ऐसा नही है। राजस्व और वन अधिकारियों द्वारा वृक्षों की उम्र को आंकलित किया गया है जिसके आधार पर मध्यस्थ न्यायाधिकरण ने अपना निष्कर्ष दिया जो कि तथ्यों पर आधारित है। निष्कर्ष न तो मनमानी, मन मौजी व विकृत है और न ही न्यायालय की अन्तरात्मा को आघात पहूचाती है।यद्यपि दो दृष्टिकोण सम्भव है तथापि मध्यस्थ न्यायाधिकरण द्वारा अपनाये गये दृष्टिकोण को सम्मान दिया जाना चाहिए। यहां तक की यदि वर्ष 1966 के बाद विवादित भूमि पर किसी वृक्ष को लगया जाता तो वर्ष 2000 में यहां एक विशाल बाग होता जो कि नही हैं। इसलिए इस न्यायालय का मत है कि विद्वान अवर न्यायालय द्वारा तथ्यात्मक पहलूओं का विश्लेषण करते हुए कानूनी त्रूटि की गयी है तथा मध्यस्थ न्यायाधिकरण द्वारा अभिलिखित तथ्यों की खोज में हस्तक्षेप किया गया है।

31. पूर्ववत विश्लेषण के दृष्टिगत, यह न्यायालय इस मत का है कि मध्यस्थ न्यायाधिकरण द्वारा कानून के अनुसार पंचाट पारित किया गया है। इसमें किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नही है तथा विद्वान अवर न्यायालय द्वारा मध्यस्थ पंचाट को अपास्त करने में त्रूटि की गयी हैं। इसलिए वर्तमान अपील स्वीकृत किये जाने योग्य है।

32. अपील स्वीकार की जाती हैं।

33. आक्षेपित निर्णय और आदेश दिनांकित 28.09.2007 अपास्त किया जाता है।

(रवीन्द्र मैठाणी, जे.)

12.04.2021